International Journal of Education and Science Research Review

IJESRR

E-ISSN 2348-6457

Volume-6, Issue-3 May- June 2019

P-ISSN 2349-1817

www.ijesrr.org

Email- editor@ijesrr.org

प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थों का महत्त्व, स्वरूप और उनकी प्रमुख प्रतिपाद्य विषय वस्तु

Dr. Nand Kishor

Lecturer Janta inter college sirsiya no. 2

Post vijayikaf District Kushinagar

सार

मन्त्र–भाग से अतिरिक्त शेष वेद–भाग ब्राह्मण है, जैसा कि जैमिनि का कथन है–श्शेषे ब्राह्मणशब्द' माधवाचार्य तथा सायणाचार्य ने भी इसी लक्षण से सहमति व्यक्त की है।ब्राह्मण–साहित्य के अन्तर्दर्शन की पृष्ठभूमि में भी, निश्चित ही यह आकांक्षा निहित रही है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि वेद–मन्त्रों की सुगम व्याख्या करने, यज्ञीय विधि–विधान के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पक्षों को निरूपित करने तथा समकालीन वैचारिक आन्दोलन को दिशा देने की भावना मुख्य रूप से ब्राह्मण ग्रन्थों के साक्षात्कार की पृष्ठभूमि में निहित रही है। वैदिक वाङ्मय सम्पर्णू धार्मिक एवं सामाजिक परिवार की अक्षय निधि है। इसमें प्रयुक्त प्रत्येक शब्द सारगर्भित है। शब्द के पम्र ाण रूप में वेदों का महत्त्व सम्पर्णू जगत में अद्वितीय है। वेदों के प्रति मानव की चिरकालीन अविचल श्रद्धा रही है। यही कारण है कि वैदिक वाङम् य अजर–अमर है। वैदिक साहित्य ने ज्ञान के प्रकार पजुं से भारतीयों को ही नहीं अपितु विदशों में भी ज्ञान पिपासुओं के हृदयों को आह्लादित किया है। ब्रह्मण ग्रन्थ इसी परम्परा में आते हैं। वेद वस्तुतः मन्त्र एवं ब्राह्मणात्मक है ।1 मंत्र भाग संहिताओं में निहित है तथा मंत्र से अतिरिक्त भाग को ब्राह्मण कहा गया है।

मुख्य शब्द : *ब्राह्मण, ग्रन्थों, महत्त्व, स्वरूप*

परिचय

उत्तर वैदिककाल में, जब वैदिक संहिताएँ धीरे–धीरे दुर्बोध होती चली गईं, मन्त्रार्थ–ज्ञान केवल कुछ विशिष्ट व्यक्तियों तक सीमित रह गया, उस समय यह आवश्यकता गहराई से अनुभव की गई कि वेद–मन्त्रों की विशद व्याख्या की जाय यही स्थिति वैदिक–यज्ञों के कर्मकाण्ड की भी थी। सुदीर्घकाल तक यागों का अनुष्ठान मौखिक ज्ञान के आधार पर ही होता रहा, लेकिन शनैरूशनै यज्ञ–विधान जब जटिल और संश्लिष्ट प्रतीत होने लगा तथा स्थान–स्थान पर सन्देह और शंकाओं का प्रादुर्भाव होने लगा, तब इस सन्दर्भ में स्थायी आधार की आवश्यकता अनुभव हुई। ब्रह्मवादियों (यज्ञवेत्ताओं) के मध्य यागीय विसंगतियों के निराकरण के लिए सम्पन्न चर्चा–गोष्ठियों, परिसंवादों तथा सघन विचार–विमर्श ने ब्राह्मण–ग्रन्थों के प्रणयन का मार्ग विशेष रूप से प्रशस्त किया। किसी भी युग के साहित्य के मूल में, तत्कालीन सांस्कृतिक विचारधारा, राजनीतिक और सामाजिक सक्रियता, आस्थाओं, आदर्शों एवं मूल्यों की अभिव्यक्ति का दुर्निवार्य आग्रह स्वभावतरू सन्निहित रहता है। ब्राह्मण–साहित्य के अन्तर्दर्शन की पृष्ठभूमि में भी, निश्चित ही यह आकांक्षा निहित रही

है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि वेद–मन्त्रों की सुगम व्याख्या करने, यज्ञीय विधि–विधान के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पक्षों को निरूपित करने तथा समकालीन वैचारिक आन्दोलन को दिशा देने की भावना मुख्य रूप से ब्राह्मण ग्रन्थों के साक्षात्कार की पृष्ठभूमि में निहित रही है।

ब्राह्मण शब्द का अर्थ

मन्त्र–भाग से अतिरिक्त शेष वेद–भाग ब्राह्मण है, जैसा कि जैमिनि का कथन है–'शेष ब्राह्मणशब्द' ।माधवाचार्य तथा सायणाचार्य ने भी इसी लक्षण से सहमति व्यक्त की है। कोश ग्रन्थों के अनुसार वेद–भाग का ज्ञापक 'ब्राह्मण' शब्द नपुंसक लिङ्ग में व्यवहार्य है। इसका अपवाद केवल महाभारत का एक स्थल है, जहाँ पुल्लिंग में भी यह प्रयुक्त है।ग्रन्थ के अर्थ में श्ब्राह्मणश शब्द का प्राचीन प्रयोग तैत्तिरीय संहिता में है। पाणिनीय अष्टाध्यायी', निरुक्त' तथा स्वयं ब्राह्मण ग्रन्थों में तो एतद्विषयक पुष्कल प्रयोग दृष्टिगोचर होते हैं।' व्युत्पत्ति की दृष्टि से यह 'ब्रह्म' शब्द से 'अण' प्रत्यय लगकर निष्पन्न हुआ है। इस सन्दर्भ में सत्यव्रत सामश्रमी का अभिमत है कि 'ब्राह्मण' शब्द से ही प्रोक्त अर्थ में 'अण' प्रत्यय लगकर 'ब्राह्मण' शब्द बना है। 'ब्रह्म' शब्द के दो अर्थ हैं– मन्त्र तथा यज्ञ।इस प्रकार ब्राह्मण वे ग्रन्थ विशेष हैं, जिनमें याज्ञिक दृष्टि से मन्त्रों की विनियोगात्मिका व्याख्या की गई है। जिन मनीषियों ने ब्राह्मणों का मन्त्रवत् प्रामाण्य स्वीकार नहीं किया है, वे भी इन्हें वेद–व्याख्यान रूप मानते हैं।

महत्त्व

वैदिक वाङ्मय सम्पूर्ण धार्मिक एवं सामाजिक परिवरो की अक्षय निधि है। इसमें प्रयुक्त प्रत्येक शब्द सारगर्भित है। शब्द के पम्राण रूप में वेदों का महत्त्व सम्पूर्ण जगत में अद्वितीय है। वेदों के प्रति मानव की चिरकालीन अविचल श्रद्धा रही है। यही कारण है कि वैदिक वाङ्म् य अजर–अमर है।वैदिक साहित्य ने ज्ञान के प्रकार पजुं से भारतीयों को ही नहीं अपितु विदेशों में भी ज्ञान पिपासुओं के हृदयों को आह्लादित किया है। ब्र ह्मण ग्रन्थ इसी परम्परा में आते हैं। ब्राह्मण 'बह्ृमन' के व्याख्यात्मक ग्रन्थों का नाम है।1 'बह्ृम' शब्द स्वयं अनके अर्थों में प्रयुक्त हाता है, जिसमें एक अर्थ है, वदे में निदिर्ष्ट मत्रं।2 ब्राह्मण ग्रन्थों में मत्रां, कर्मों तथा विनियोग की व्याख्या की गयी है। ये वैदिक वाङ्मय का अत्यन्त प्राचीनतम, विशालकाय एवं बहुचर्चित ग्रन्थ है । इन्हें भट्ट भास्कर ने यज्ञों की वज्ञैानिक, आधिभौतिक तथा आध्यात्मिक मीमांसा प्रस्तुत करने वाले ग्रन्थ की सज्ञां दी है। साधारणतया ब्राह्मण ग्रन्थों में कर्मकाण्ड और उसके विधि–विधानों का उल्लखे है। शुष्क कर्मकाण्ड और विधि – विधानों के अतिरिक्त विभिन्न दृष्टिकोणं से युक्त भारतीय समाज का चित्रण भी इनमें यथेष्ट मात्रा में हुआ है। साथ ही दार्शनिक विचारधाराओं का भी प्रभाव है।

परिवर्तनशील परिस्थितयों का प्रभाव वेदों पर भी पडऩा स्वाभाविक था। अतः आदि ऋषियों ने मत्रोच्चारणकाल में ही वदोर्थ की प्रक्रिया का सुभारम्भ किया और इसके विकास में अपना योगदान दिया। वेदार्थ को समझने के लिए ब्राह्मण ग्रन्थों में विशाल सामग्री समाहित है जिसके आधार पर मत्रों की आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक विवचे ना की जा सकती है। 'बह्म ' शब्द यज्ञ के रुप में पय्रुक्त हाता है। विस्तृत अर्थ में यज्ञ

International Journal of Education and Science Research Review
Volume-6, Issue-3 May- June 2019 E-ISSN 2348-6457 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

'बह्म 'और वितान शब्द के द्वारा अभिहित किया जाता है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार यज्ञ के कर्मकाण्ड की व्याख्या विवरण सहित प्रस्ततु करना ब्राह्मणों का मुख्य विषय है। यज्ञ ही वेद का मलू ाधार है अर्थात् यज्ञ और देव ही वैदिक जगत के मलू स्त्राते हैं। इन मलू स्त्रोतों को सरल बनाना ही ब्राह्मण गन्थों का लक्ष्य रहा है।

सास्कृतिक महत्त्व

कर्तव्य, सदाचार, नैतिकता वर्णश्रमों की व्यवास्था के लिए ब्राह्मण ग्रन्थों को महत्त्वपर्णू स्थान पप्रप्त है।

सास्कृतिक दृष्टिकाणे से ब्राह्मण ग्रन्थ अति उत्तम है वेदों में सारं कृतिक वणर्न प्रचुर मात्रा में हुआ है । अथर्ववदे एवं यजुर्वेद विषेष रूप से उल्लखेनीय है प्रा0 मैक्समुलर का यह कथन है –

भारतीय संस्कृति तथा भारतीय विचार परम्परा का अधांनुकरण करने वाले किसी वर्ग विशेष के लिए ब्राह्मण ग्रन्थ कितना ही आनन्द क्यों न प्रदान करते हा, एक धर्म आरै सरं कृति से पृथक रहने वाले एक साधारण आलाचे क की दृष्टि से इस साहित्य का कुछ भी महत्त्व हो किन्तु जो व्यक्ति एक विषेष धर्म के अनयुषयी नहीं है उनका उन साहित्य के लिए महत्त्व कवेल उस साहित्य की प्राढेत़ा और कला तक ही सीमित रहता है क्योंकि ब्रह्मण ग्रन्थ में ऐतिहासिक दृष्टि से विशाल हिन्दू जाति के सामाजिक, धार्मिक और नैतिक विकास की परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पर्याप्त प्रमाणिक सामग्री है। ब्राह्मण गन्थ सांस्कृतिक महत्त्व पर पर्याप्त प्रकार डालता है।

ब्राह्मण ग्रन्थों के सारं कृतिक महत्त्व को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है –

वर्ण व्यवस्था

'वर्ण' शब्द की निष्पत्ति 'वृजवरणे' धातु से हुई है ।3 वर्ण व्यवस्था ब्राह्मण ग्रन्थों की ही देन है । इन

1. स य इदमविद्वान् अग्नि होत्रं जुहोति यथाङग् ासनपाहे य भस्मनि जुहुयात् ताट्टक्तत् स्यात् ।
2. षडविं ब्राह्मण
3. षडविं ब्राह्मण

ग्रन्थों में सामाजिक व्यवस्था को सुचारूप से चलाने के लिए कार्य की दृष्टि से समाज को चार भागों में विभाजित किया गया है यह चार विभाग ही चार वर्ण थे जिन्हें क्रमाः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैय तथा शद्रू की संज्ञा दी गयी। सम्पर्णू सामाजिक कार्यों का विभाजन इस प्रकार किया गया था कि इन चारों वर्णों के द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न हो जाते हैं जैसे पठन–पाठन आदि से सम्बन्धित कार्य ब्राह्मण वर्ग का था । सुरक्षा शासन से सम्बद्ध कार्य क्षत्रिय का था । कृषि वाणिज्य आदि कार्यों को करने वाला वैश्य तथा सेवा इत्यादि

International Journal of Education and Science Research Review
Volume-6, Issue-3 May- June 2019 E-ISSN 2348-6457 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

को करने वाले को शद्रू कहा जाता था। पुरुष सूक्त में चारो वर्णो की उत्पत्ति विराट पुरुष के विभिन्न अगों से बतायी गयी है –

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत

बाहूराजन्यः कृतः ।

उरुतदस्य यद् वैश्यः

पादाभ्याम् शूद्रोऽजायत ।।[1]

जिनके आधार पर उनकी स्थित और कार्यों का बोध हातो है। जैसे ब्राह्मण की उत्पत्ति मुख से बतायी गयी है अतः उसका कार्य पठन–पाठन रखा गया तथा समाज में श्रेष्ठ स्थान दिया गया। क्षत्रिय की उत्पत्ति भुजाओं से हुई अतः उनका कार्य रक्षा करना था। वैय की उत्पत्ति जघांओं से हुई अतः उदर पूर्ति का कार्य उनको दिया गया। पैरों से उत्पन्न हुए अतः सेवा का कार्य उनको दिया गया। इस पकार एक मत्रं के द्वारा ही सम्पर्णू वर्ण व्यवस्था को स्पष्ट कर दिया गया। इस प्रकार से सामाजिक कार्य को सुचाररूप से चलाने के लिए वर्ण व्यवस्था का विधान किया गया था उसी पकार जीवन को सफल बनाने तथा सम्पर्णू उत्तरदायित्वों को बहन करने के लिए चार आश्रमों की व्यवस्था भी की गयी थी ।

ब्राह्मण

शतपथ ब्राह्मण में ब्राह्मण की संज्ञा पलास वृक्ष से दी गयी है यथा– 'बह्म वै पलासः' नक्षत्रों में रोहिणी को ब्राह्मण माना गया है 'बह्म हि वसन्त' शतपथ ब्राह्मण में ऋतुओं में वसन्त को ब्राह्मण कहा गया है। ऋग्वदे में वर्णन आता है कि जो राजा ब्राह्मण को उच्च स्थान देकर उसका आदर करता है तो वह

1. परुष सूक्त
2. शतपथ ब्राह्मण
3. तैत्तरीय ब्राह्मण
4. शतपथ ब्राह्मण

शान्त व आनदं से रहता है उसे धन – धान्य की कमी नहीं रहती ।

प्रजा उसका सदा नमन करती थी ऐसे राजा की सहायता देवता स्वतः ही करते हैं। एक अन्य मन्त्र में ब्राह्मण लोगों में धन वितरित करने का उल्लेख किया गया है। यजुर्ववदे में भी एक स्थल पर चारों वर्णों का उल्लेख किया गया है। यजुर्वेद में भी एक स्थल पर चारों वर्णों का उल्लेख किया गया है। जहॉ ब्राह्मण को ब्राह्मणी कहा गया है। 'ऋग्वदे'में ब्राह्मणों के मैत्रीभाव से यज्ञ करने का उल्लेख भी किया गया है।

इन उल्लेख से स्पष्ट है कि समाज में ब्राह्मणों का बहुत आदर किया जाता है वे ईश्वर आराधना, अध्यापन, वेद पढना, यज्ञ करना कराना, यागे साधना, तपस्चर्या, यम, नियम आदि आत्म विकास के मार्ग में अगस्रर हानो ही ब्राह्मण के कर्तव्य थे।

कर्म का महत्त्व

ब्राह्मण ग्रन्थों में कर्म की अत्यधिक महत्ता है । कर्म के महत्त्व का प्रतिपादन शतपथ ब्राह्मण में हुआ है– 'न श्वः श्वमुपासीत। को हि मनुष्यस्यश्वो वेदः।'अर्थात् कल करूँगा, ऐसा नहीं सोचना चाहिए मनुष्य के कल को कोन जानता है?इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि जो होने वाला है वह अनिश्चित एवं संदेहात्मक है जो हो चुका है वह सत्य और निश्चित है। गोपथ ब्राह्मण के अनुसार मनसा ध्यायेत–यन्द्रवा अहं किचन मनसा ध्यास्यामि, तथैव तदभविष्यति।तद् स्म तदैव भवति। अर्थात् किसी भी कार्य का मन से ध्यान करूँगा, वह अवय सिद्ध होगा । ब्राह्मण के मुख्यतः तीन कर्तव्य है –

आनुवंशिक पवित्रता, अपने जातिगत कर्तव्यों के प्रति आस्था, लोक में शिक्षा का प्रसार । ऐतरेय ब्राह्मण में क्षत्रिय के लिए 'बलि' शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है। क्षत्रिय का कर्तव्य प्रजा में सुव्यवस्था बनाये रखना वैश्य को साक्षात राष्ट्र कहा गया है। उसी के द्वारा अर्जित अर्थ से अन्य वर्षों का निवार्ह होता है। शुद्र का विशेष कर्तव्य द्विजाति की सेवा करना आरै उनसे भरण पाे ाण प्राप्त करना है। ब्राह्मण ग्रन्थों में कर्म पर विशेष ध्यान दिया गया है क्योकि भारतीय मनीषियों का यह मत रहा है कि कर्म के द्वारा ही सामाजिक व्यवस्था सुचारूप से चलायी जा सकती है।

धर्म और आचार

ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार यज्ञ का अनुष्ठान ही मुख्य धर्म था । समस्त कर्मो में यज्ञ को ही श्रे ठतम माना गया है। यज्ञ का सम्पादन बाह्य आचरण होने के कारण आन्तरिक आचरण के ऊपर आधारित था। अमैध्य वे पुरूषों यदनृतं वदति। अर्थात् असत्यवादी अपवित्र होता है क्योंकि असत्यवादी का तो तेज प्रतिदिन कम होता जाता है और वह पापी हो जाता है। अतः मनुष्य को सत्य बोलना चाहिए। ताण्ड्य ब्राह्मण में असत्य भाषण को वाणी का छिद्र कहा गया है। मानव में विनय और अहंकार की स्पर्धा भी सदैव विद्यमान रहती है । वह अहंकार की सीमा को लांघकर स्वयं को सर्वे सर्वा समझने लगता है और यज्ञ इत्यादि धार्मिक कृत्यों का विरोध आरम्भ कर देता है। शतपथ ब्राह्मण में उल्लिखित है 'तस्म्रान्नाविभ्न्येत पराभवस्य तन्मुखं पदतिमानः' अर्थात् अभिमान पतन का द्वार है। प्रत्येक मनुष्य जन्म काल से ही देवता, ऋषि, पितृ और गुरू का ऋणी होता है। 'ऋष' ह वै जायते, यो अस्ति। स जायमान एवंदेवभ्ेय ऋषिभ्यः पितृभ्यो मनुष्येभ्यः।' अतः इन ऋणों से मुक्ति प्राप्त करना ही धर्म है। सुदृढ़ आत्मबल के लिए धर्म आचार और नैतिकता का परिपालन अत्यावश्यक है। समाज में आतिथ्य की प्रतिष्ठा थी। जो मनुष्य देवो, पितरों अतिथियों को दान से तर्पण नहीं करता है। वह 'अनद्वा' अमृत कहलाता है। तत्कालीन परिस्थितियों में यज्ञ के अनुष्ठान को ही मुख्य धर्म माना गया है इसके अतिरिक्त सत्य, विनय और मानव का अपने गुरूजनों के प्रति कर्तव्य को भी मान्यता प्रदान की गयी ।

स्वरूप

वेद वस्तुतः मन्त्र एवं ब्राह्मणात्मक है। मंत्र भाग संहिताओं में निहित है तथा मंत्र से अतिरिक्त भाग को ब्राह्मण कहागया है। जैमिनीय के अनुसार वेद के मत्रंशवशिष्ट अंश 'ब्राह्मण' है। जो न तो मन्त्र ही है और न मन्त्र ही कहे जा सकते है। 'ब्रह्म' यज्ञ का भी पर्याय है। यज्ञ के समय पुरोहितों द्वारा विभिन्न देवताओं की उपासना में जिन छन्दों का गान किया जाता है वे मंत्र हैं और उन मंत्रो की विधि एवं विनियोग का वर्णन करने वाला ग्रन्थ ब्राह्मण है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में अन्तर्निहित विषय वस्तु 1 के अवलोकन से पूर्व 'ब्राह्मण' शब्द के अर्थ पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। 'ब्रह्मन' शब्द में तद्धितार्थक 'अण्' प्रत्यय लगने से ब्राह्मण शब्द की निष्पत्ति हुई। पाश्चात्य विद्वत वर्ग में 'प्रार्थना एवं उपासना' से ब्राह्मण शब्द की उत्पत्ति मानी जाती है। सायण ने कहा है – 'जो परम्परा से मन्त्र नहीं है वह ब्राह्मण है और जो ब्राह्मण नहीं हैं वह मन्त्र हैं।'

ग्रन्थवाची ब्राह्मण शब्द का प्रयोग नपुसं क लिंग में मिलता है 'ब्राह्मण' ब्रह्मसंघाते वेद भागे नपुसंकम्' ब्रह्मन के व्याख्यात्मक ग्रन्थ का नाम ब्राह्मण है । 'ब्रह्म' शब्द अनेक ग्रन्थों में प्रयोग हुआ है जिसमें भी एक अर्थ है – 'ब्रह्म वै मंत्रः' 8 आप्टे के कोश ग्रन्थ में भी 'ब्राह्मण' शब्द की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला गया है । तदनुसार ब्राह्मण शब्द का तात्पर्य वेद के उस भाग से है जिसके अन्तर्गत यज्ञों के समय मत्रं प्रयोग के नियम तथा विस्तृत आख्यान से युक्त व्याख्यान निहित है ग्रन्थवाची 'ब्राह्मण' शब्द की

परिभाषा भट्ट भास्कर ने निरुक्त रूप में प्रस्तुत की है –

'ब्राह्मणं नाम कर्मणस्तन्मन्त्राणां च्वयाख्यान ग्रन्थः।' 1

ब्राह्मण ग्रन्थ में यज्ञिक कर्म काण्ड प्रक्रिया के सक्ष्म निरीक्षण के साथ वैदिक मंत्रो के द्वारा अनुष्ठानों की संगति स्थापित की गयी है। शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ को प्रजापति और प्रजापति को ब्रह्म कहा गया है – 'एष वै प्रत्यर्थ यज्ञोयत् प्रजपतिः।' इससे यह सिद्ध होता है कि यज्ञ और ब्रह्म दोनों एक हैं। यही कारण है कि यज्ञ अर्थात् ब्रह्म के प्रतिपादक ग्रन्थ होने के कारण इनको 'ब्राह्मण' नाम से सम्बोधित किया। ब्राह्मण ग्रन्थों के नामकरण का सम्बन्ध ब्रह्मवादियों से है न कि ब्राह्मण जाति से। यदि यह माना जाय कि रचना के प्रति जातीय गर्व के कारण वदे उपनिषद आदि को त्याग कर ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना ब्राह्मणों ने की यह उचित नहीं प्रतीत होता क्योंकि एकलिंग के विचारों के अनुसार यागिक कृत्यों के प्रधान सचंशलक ब्राह्मण पुरोहित थे अतः ग्रन्थों को ब्राह्मण कहा गया है । यह विचार उपयुक्त प्रतीत होता है। जिस प्रकार यज्ञ की गूह्यतम गुत्थियों को सुलझाने वाले मीमांसक ब्रह्मवादी कहे गये उसी प्रकार यज्ञ की गूढ़ मीमांसा से सम्बन्धित होने के कारण ब्राह्मण नाम दिया गया । दसूश्रे शब्दों में यदि यह कहा जाय कि ब्रह्म के व्याख्यापरक ग्रन्थ ही ब्राह्मण ग्रन्थ हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

प्रतिपादित विषय वस्तु

ब्राह्मण ग्रन्थों की रूपरेखा एवं स्वरूप का परिचय प्राप्त करने के उपरान्त इसके विषय वस्तु के सम्बन्ध में सहज ही जिज्ञासा उत्पन्न होती है । अनेक विद्वानों ने इस विषय में अपने विचार प्रकट किये हैं, जिसमें से शबरस्वामी कात्यायन, वाचस्पति मिश्र प्रमुख हैं । ब्राह्मण ग्रन्थ को दस श्रेणियों में विभक्त किया गया है –

हेतु निर्वचनं निंदा प्रशंसा सशंयों विधिः ।

परक्रिया पुराकल्पों व्यवधारणकल्पना ।।

उपमानम् दशैते तु विधयों ब्राह्मणस्यतु ।

एतत् स्यात् सर्व वेदेषु नियतं विधिलक्षणम् ।।1

इस प्रकार सामान्य रूप से इनमें हेतु, निर्वचन, भर्त्सना, प्रशसां, सांय, विधि, उदाहरण, उपाख्यान, पुराकल्प और पूर्वापर की आलोचना से अर्थ का व्यवधारण करना आदि विषय है । किन्तु यदि सूक्ष्म रूप से विश्लेषण किया जाय तो इनमें से अधिकांश विषय ब्राह्मण ग्रन्थों के मूल या आधार भूत विषयन होकर उनके निर्वाह मात्र सिद्ध होगें। अतः शबरस्वामी के मतानुसार वस्तुतः विधियाँ ही अर्थवादादि के रूप में ब्राह्मण ग्रन्थों में दस प्रकार से व्यवहृत हुई है। उदाहरण सहित इनका स्पष्टीकरण इस प्रकार है –

1.हेतु

कर्मकाण्ड सम्बधी किसी विशिष्ट विधि की पृष्ठभूमि में निहित कारणवत्ता का निर्देश यथा – 'तेन ह्यान्नं क्रियते' 1 अर्थात् सूप से होम करना चाहिए क्योंकि उससे अन्न को तैयार किया गया है । इस प्रकार यहाँ सूप से हवन करने के कारण का निर्देश किया गया है ।

2. निर्वचन

व्युत्पत्ति के माध्यम से याग में प्रयोज्य पदार्थ की सार्थकता का निरूपण यथा– 'तद्दध्नोदधित्वम्' अर्थात् यही दही का दहीपन है।

3. निंद्रा

याग में उस वस्तु की अनुपादेयता का प्रतिपादन करना, यथा – 'अमेध्या वै भाषा'3 उड़द यज्ञ की दृष्टि से अनुपादये है ।

4. प्रशंसा

वायु के निमित्त क्यों यागानुष्ठान किया जाय, इसका प्रतिपादन इस रूप में किया गया है कि वायु शीघ्रगामी देवता हैं – 'वायुर्वे क्षेपृष्ठा देवता ।'

5. सांय

इसका तात्पर्य है संदेह, जैसे यजमान के भीतर यह संदेह उत्पन्न हो जाय कि मैं होम करूँ कि नहीं । 'तद्व्यचिकित्सज्जुहुवानी इमा होषादोम्।'

6. विधि

औदुम्बरी गूलर की वह शाखा जिसके नीचे बैठकर उद्गातृ – मण्डल सामगान करता है कितनी बड़ी होनी चाहिए, के विषय में यह विधान मिलता है कि वह यमजान के परिमाण की होनी चाहिए– 'यजमानेन सम्मिता औदुम्बरी भवति ।'6

7.परकृति

इसका अभिप्राय है दूसरे का कार्य यथा – 'माषानेव मह्यं पचति' 1 वह मेरे लिए उड़द पकाता है।

8. पुराकल्प

'पुरा ब्राह्मणा अभैषु' 2 अर्थात् पुराना आख्यान, जेसै– प्राचीन काल में ब्राह्मण डर गये ।

9. व्यवधारण कल्पना

इसका अभिप्राय है विषेष प्रकार का निश्चय करना । इसको इस उदाहरण के द्वारा समझाया जा सकता है कि जितने घोड़ों का प्रतिग्रह करें, उतने ही वरूण देवता चतुष्पालों से याग करें –

'यावतोऽश्वान् प्रतिगह्ण णीयात्तावोवरूणान् चतुष्पालान्निर्वपेत् ।'3

10. उपमान

शबरस्वामी ने यद्यपि उपमान का उदाहरण नहीं दिया है किन्तु छन्दोग्य उपनिषद् के इस अंा

''स यथााकुनिः' सूत्रेण प्रबद्धो दिशं दिशं पतित्वा अन्यत्रायतनमलब्ध्वा बन्धनमेवोपश्रयते, एवमेव खलु सोम्य । तन्मनो दिश–ं दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनमलब्ध्वा प्राणमेवोपश्रयते प्राणबन्धनं हि सोम्य । मन इति ।''

इस प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में यागानुष्ठान की विभिन्न विधियों के निरूपण में प्रशंसा और निन्दा ही नहीं, उनके औचित्य बाध्ेशक हेतु भी दिये गये हैं साथ ही यागों, उनकी अनुष्ठान विधियों, द्रव्यों सम्बद्ध देवों और विनियुक्त मंत्रों का छन्दस् इत्यादि के द्वारा औचित्य निरूपण भी किया गया है। यजमान के सम्मुख कृत्यविशेष से होने वाले हानि–लाभ का यथावत् विवरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न भी किया गया है, जो मानवीय भावना तथा मनोविज्ञान, दोनों ही दृष्टियों से उपयोगी है। अग्निष्टोम याग के अनुष्ठान के सम्बन्ध में ताण्ड्य ब्राह्मण में एक स्थल पर कहा गया है कि अग्निष्टोम याग समस्त फलों का साधन होने को प्रस्तुत

किया जा सकता है – अग्निष्टोम याग के अनुष्ठान से समस्त फल प्राप्त हो जाते हैं । इस याग के करने से पशु समृद्धि, ब्राह्मवर्चस् की प्राप्ति आदि अलग–अलग फलों की प्राप्ति भी हो सकती है।

निष्कर्ष

ब्राह्मण ग्रन्थों में कृत्य विशेष में विनियुक्त मंत्रों के औचित्य का प्रदर्शन भी किया गया है । जिसे ब्राह्मण ग्रन्थों की शास्त्रीय शब्दावली में रूप समृद्धि कहा गया है। : समृद्धि का अभिप्राय है– क्रियामाण कर्म के साथ विनियुक्त मंत्र का अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है, जिससे स्वयं यज्ञ समृद्धि होता है।1 रूप समृद्धि का वास्तविक तात्पर्य है विशिष्ट कृत्यों के समर्थन में विनियुक्त मंत्र की सार्थकता का प्रदशर्न जहाँ विनियुक्त स्तोत्र के अर्थ से औचित्य सीधे बोध नही हो पाता वहाँ ब्राह्मण ग्रन्थें में मत्रं गत देवों से कृत्य को सम्बद्ध किया गया है यथा किसी दीर्घरोगी को रोगनिवृत्ति के लिए ताण्ड्य ब्राह्मण में 'आ नो मित्रा वरूणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजांसि सक्रु त' 3 मत्रं विनियोग किया गया है।

संदर्भ

1. जैमनीय मीमांसा सूत्र, 2.1.33
2. मन्त्रश्च ब्राह्मणश्चेति द्वौ भागौ तेन मन्त्रतरू। अन्यद् ब्राह्मणमित्येतद् भवेद् ब्राह्मणलक्षणम्। जैमिनि न्यायमाला, 2.1, श्अवशिष्टो वेदभागो ब्राह्मणम्श ऋग्वेद भाष्य भूमिका पृष्ठ 37
3. ब्राह्मणं ब्रह्मसंघाते वेदभागे नपुंसकम् मेदिनीकोश।
4. य इमे ब्राह्मणारू प्रोक्ता मन्त्रा वै प्रोक्षणे गवाम्। एते प्रमाणं उताहो नेति वासव। महाभारत, उद्योग पर्व महाभारत, भाण्डारकर–संस्करण।
5. एतद् ब्राह्मणान्येव पञ्च हर्वींषि, तैत्तिरीय संहिता, 3.7.1.1
6. ऐतरेयालोचन, पृष्ठ 2
7. ब्राह्मणं नाम कर्मणस्तन्मन्त्राणां च व्याख्यानग्रन्थरू। भत्तभास्कर, तैत्तिरीय संहिता 1.5.1 पर भाष्य
8. नैरुक्त्यं यस्य मन्त्रस्य विनियोगरू प्रयोजनम्। प्रतिष्ठानं विधिश्चैव ब्राह्मणं तदिहोच्यते। श्वाचस्पति मिश्रश
9. स्वामी दयानन्द सरस्वती, अनुभ्रमोच्छेदन, सत्यार्थप्रकाश, पृष्ठ 288 (बहालगढ़ संस्करण, सं 2029), श्तत्तन्मन्त्राणां तत्तद्यागाद्युपयोगित्वं वर्णयितुं समासतस्तात्पर्य्यमन्वाख्यातुं वा व्याख्यानानि च कृतानि। ततश्च विध्यर्थवादाख्यानपूर्वकमादिमं मन्त्र–भाष्यं ब्राह्मणामित्येव पर्यवस्यते ब्राह्मणलक्षणम्। श्ऐतरेयालोचनश, पृष्ठ 11 इस सन्दर्भ में कुछ कथन ये हैं– (क) मन्त्रब्राह्मणयोर्वेद इति नामधेयं षडंगमेके। श्तन्त्रवार्तिकश 1.3.10 (ख) वेदों मन्त्रब्राह्मणाख्यो मन्त्रराशिरू। (ग) तत्र ब्राह्णात्मको वेदरू। श्तैत्तिरीय संहिता, सायण–भाष्योपक्रमणिका।
10. ब्राह्मण ग्रन्थों की श्रुतिरूपता पर आचार्य पंण्डित बलदेव उपाध्याय ने वैदिक साहित्य और संस्कृति में विस्तार से विचार किया है। इसमें उन्होंने मनुस्मृति, दार्शनिक सूत्रकारों, पाणिनीय अष्टाध्यायी,

व्याकरण महाभाष्य और अन्य आचार्यों के मतों की विशद मीमांसा करते हुए ब्राह्मणों की वेदरूपता का युक्तियुक्त उपपादन किया है।

11. पञ्चर्त्विजरू संरब्धा सर्पन्ति पाङ्क्तो यज्ञो यावान् यज्ञस्तमेव सन्तन्वन्ति। तैत्तिरीय ब्राह्मण, 6.7.12
12. ताण्डय ब्राह्मण, 6.5.1— में वर्णित यह आख्यायिका किंचित् परिवर्तित रूप में जैमिनीय ब्राह्मण तथा शतपथ ब्राह्मण में भी मिलती है। जैमिनीय ब्राह्मण में आदित्य के स्थान पर अग्नि का उल्लेख है और शतपथ ब्राह्मण में देवों के द्वारा वृत का शिर काटने का निर्देश हैरू वृत्रो वै सोम आसीत्। तं यत्र देवा अपघ्नन् तस्य मूर्द्धोद्ववर्त, स द्रोणकलशोऽभवत्, शतपथ ब्राह्मण 4.4.3.4
13. एष वाव यज्ञो यदग्निष्टोमरू। एकस्मा अन्यो यज्ञरू कामायाह्रियते सर्वेभ्योऽग्निष्टोमरू। ताण्डय ब्राह्मण, 6.3.1—2
14. एतद्वै यज्ञस्य समृद्धं यद्रूपसमृद्धं यत्कर्मक्रियामाणमृग्यजुर्वाऽभिवदति। —गोपथब्राह्मण 2.4.2